ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 2.7825(UIF) VOLUME - 7 | ISSUE - 11 | JULY - 2021

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

भगवानदास मोरवाल के साहित्य में हाशिए पर मुसलमान

डॉ. रज्जाक कासार
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
श्री शिवाजी कॉलेज, कंधार,
जि. नांदेड (महाराष्ट्र).

कथाकर भगवानदास मोरवाल ने अपने साहित्य में विभिन्न पहलुओं को स्थान दिया है। ठीक उसी तरह मुस्लिम समाज को भी स्थान दिया है। सिर्फ मुस्लिम समाज के बारे में ही अपनी बात नहीं कही है वरन् मुस्लिम समाज की परम्परा जो बरसो से चली आ रही है और आज किस रूप में हमारे देश में नजर आती है। इन सारी बातों को अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। किस प्रकार आज भी सदियों पुरानी मानसिकता के साथ जी रहे हैं और हाशिए में ही पड़े हैं। अगर कोई अन्य जाति का व्यक्ति हो जो मुस्लिम सम्प्रदाय के रीति–रिवाज, परम्परा, तीज, त्यौहार को नहीं जानता तब वह व्यक्ति मोरवाल के साहित्य द्वारा उस समाज को जान सकता है। साथ ही हम यह भी कह सकते हैं कि मोरवाल ने अपने साहित्य में मुस्लिम समाज की अच्छी बातें ही कही हो ऐसा नहीं है। इस समाज में कई ऐसे कुरिवाज और कुरीतियाँ हैं जिनका उन्होंने विरोध भी किया है। खुद सामने न आकर पात्रों के माध्यम से उनका विवेचन–विश्लेषण किया है। जैसे मुस्लिम समाज में खुद तलाक बोल देने भर से वैवाहिक जीवन समाप्त हो जाता है। इस बात का विरोध मुमताज और शकीला जैसे पात्रों के द्वारा शरीअत और हदीस के आधार पर लोगों को सच्ची बात से अवगत कराने का प्रयास किया है। जिस तरह हिन्दू समाज में निम्न वर्ग पाया जाता है, ठीक उसी तरह मुस्लिम समाज में भी निम्न वर्ग मौजूद है। इस निम्न वर्ग की मानसिकता आज भी वैसी ही है जैसे बरसों पहले हुआ करती थी। इसी कारण शायद वे कभी हाशिए से बाहर ही नहीं निकल पाए। यदि कभी कोई निकलने का प्रयास भी करता है तो उच्च वर्ग वाले उसे बाहर निकलने ही नहीं देते।

भगवानदास मोरवाल ने अपनी कलम के माध्यम से बड़े ही तीखे और धारदार वार करके सबको सही रास्ते पर लाने का सफल प्रयास करते हैं। कोई अपने से आधी उम्र की लड़की के साथ शादी करके किसी दूसरे शहर में ले जाता है वह भी खरीदकर, तो क्या स्त्री अब खरीदने और बेचने की वस्तु मात्र बनकर रह गई है। एक लड़की को खरीदकर ले आता है और दूसरे को बेच दिया जाता है। मोरवाल ने अपने साहित्य में जो भी बात मुस्लिम समाज और उसकी अस्मिता के बारे में कही है वे सारी बातें आज मुस्लिम परिवारों में अवश्य देखने को मिलती हैं। अरब परिवारों में संयुक्त परिवारों का प्रचलन पहले से ही था। भारतीय मुस्लिम समाज में ग्रामीण संयुक्त परिवारों का अपना अलग ही अंदाज पाया जाता है। तीन–चार पीढियाँ एक साथ एक ही छत के नीचे रहती नजर आती है। पिता, पुत्र, नाती, पोते सब एक ही साथ रहते हैं। परिवार का मुखिया ही निवास–स्थल, खान–पान, आय–व्यय, संपत्ति, रहन–सहन सबका संचालन करता नजर आता है। शहरीकरण एवं पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव के कारण अवश्य ही विभक्त परिवार अस्तित्व में आए हैं। विभक्त परिवार के पीछे के कारण शिक्षा, नगरीय जीवन के प्रति आकर्षण और औद्योगीकरण है। आज के युग में तो व्यक्ति अपने छोटे से परिवार के साथ जिन्दगी बिताना ज्यादा पसंद करता है। ''ऐसा ही घर, घर नहीं हवेली है – हाजी चाँदमल की हवेली।''[1]

'बाबल तेरा देस में' उपन्यास में पूरे उपन्यास की कथा हाजी चाँदमल की हवेली के आस–पास ही घूमती रहती है। पूरे उपन्यास का केन्द्र बिन्दु हवेली ही है। इस हवेली में पूरा परिवार एक साथ संयुक्त रूप में रहते हैं। तीन–चार पीढ़ियों का संयुक्त परिवार इस हवेली में रहता है। इतना बड़ा परिवार साथ में रहने के कारण आपसी मतभेद तो होता ही रहता है। किसी छोटी सी बात को बड़ा रूप लेते वक्त नहीं लगता है। इस हवेली में कई ऐसी घटनाएँ घटित होती रहती हैं, जिससे हमें ऐसा लगता है कि ऐसी मानसिकता के कारण ही आज भी मुस्लिम लोग कहीं न कहीं हाशिए पर ही हैं। परिवार के सभी सदस्यों को परिवार के मुखिया द्वारा लिया गया फैसला ही सर्वस्व माना जाता है। चाहे वह फैसला सही हो या गलत हो उसे मानना ही पड़ता है। मुस्लिम समाज में औरतों के लिए 'पर्दा' बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। मुस्लिम औरतों के परिधान में बुरका एक अनिवार्य वस्त्र है। ''यह पहला मौका है जब कोई मौसी इस मोहल्ले में बुर्के में आई है।''[2]

शादी करके आयी नई दुल्हन को सब इस तरह से देखते हैं जैसे कोई नया मेहमान आया हो और सब उसका स्वागत कर रहे हों। मुस्लिम समाज में परदा अपना एक अलग ही महत्व रखता आया है। इसी बात को मोरवाल जी ने अपने साहित्य में प्रकट किया है। उपन्यास हो या कहानी मोरवाल ने सभी जगहों पर अपने अनुभव को हमारे सामने लाने का प्रयत्न किया है। प्राचीन काल में सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, दार्शनिक अनेक क्षेत्रों में नारी का अपना पूर्ण और विशिष्ट योगदान रहा है। इसी कारण समाज में अनेक परिवर्तन आते रहे हैं। अन्य धर्म और जाति की तरह ही मुस्लिम समाज में भी विवाह का अपना अलग महत्त्व है। कुरान शरीफ और शरीअत में ब्रम्हचर्य जीवन को मान्यता नहीं दी है। ''अपनी कौम की विधवा स्त्रियों के निकाह कर दिया करो इतना ही नहीं अपने नौकरों का भी निकाह कर दो चाहे वे मुफलिस ही क्यों न हो।''[3]

इस्लाम ने पुरूषों को चार बीवियाँ करने की स्वतंत्रता दी है। उसकी कुछ अनिवार्य शर्तों के साथ, लेकिन मुस्लिम समाज में पुरूष वर्ग इसका नाजायज फायदा उठाकर समाज में अनेक दूषणों को बढ़ावा देता है। ये हुक्म कुरान शरीफ में तत्कालीन समाज व्यवस्था को ध्यान में रख कर दिया था, पर इसका आज के समय में गलत मतलब निकाला जाता है। ''हमारी मेवात में महर देना की रिवाज भी है, कुरान में तो साफ लिखा है कि औरत के महर को खुशदिली के साथ अदा करो।''[4]

मोरवाल अपने साहित्य के माध्यम से निकाह में दिए जाने वाले मेहर की बात को प्रस्तुत करते हैं। शादी के वक्त लड़की को पिता की तरफ से जो रकम दी जाती है, ताकि कभी भी आगे चलकर बुरे दिन आए तब इसी रकम से अपना आगे का जीवन व्यतीत कर सके। 'बाबल तेरा देस में' उपन्यास की हवेली में कई लोग ऐसे हैं जो चाहते हैं कि पहले मुबारक अली अपनी पढ़ाई पूरी कर ले और बाद में उसकी शादी की जाए। पर लड़की का बाप और भाई दोनों सरकारी अफसर हैं, अच्छा खासा सामान मिलेगा इसी लालच में ही उसकी शादी कर दी जाती है। मुबारक अली मैट्रिक की परीक्षा में भी फेल हो जाता है। दुल्हन की उम्र अभी सिर्फ चौदह–पंद्रह साल ही थी। इस प्रकार कभी–कभी समाज के रिवाज कुछ गलत और अलग ही रूप धारण कर लेते हैं। मोरवाल ने कुछ ऐसी ही बातों को हमारे सामने रखा है। कुछ धनवान लोग बहुत सारा मेहर देते हैं, उसके पीछे मुसीबतों का सामना करना पड़ता है, मध्यवर्ग वाले लोगों को इतना सारा दहेज नहीं दे पाते और ससुरालवाले लड़की के साथ इसी कारण बुरा व्यवहार करते हैं। ''एक दिन मेरी सास और नणद में कुछ ऐसी बात हो रही थी कि अगर ब्याह में मोटर सायकिल और मिल जाती तो... ।''[5]

जैनब को शादी के वक्त महर के रूप में कितना ही कुछ दिया गया था पर उसकी ससुराल वालों को अभी भी कुछ और चाहिए। इसलिए जैनब का पति शादी के बाद उसके नजदीक ही नही आता और उसे उसके पीहर में छोड़ जाता है। घर के सभी लोगों ने जैनब के पति को एक मोटर साइकिल दिलवा दी तब उसे कोई ऐतराज नहीं था जैनब के पास आने में और वह अब जैनब को खुश भी रखता है। अब उसे कोई मुश्किल नहीं है। मोरवाल ने यहाँ यह भी दिखाने का प्रयास किया है कि लड़के वालों के मन में जो भी बुरी लालच है, वह किसी मध्यवर्ग के व्यक्ति के लिए बहुत बड़ी बात भी हो सकती है। कभी–कभी यह रिवाज एक दूषण भी बनकर हमारे सामने आता है। समय के साथ अलग रूप में यह हम लोगों के सामने आता है। मेहर आज दहेज के रूप में हमारे सामने है, कितनी ही लड़कियाँ और उनके माँ–बाप की जिन्दगी को नर्क बनाने वाला यह दूषण है। मोरवाल ने अपने साहित्य में जिस मेव समाज को हमारे सामने प्रस्तुत किया है, लगता है वहाँ मेहर एक सामान्य सी बात होती ही होगी। सभी नई दुल्हन अपने साथ ढ़ेर सारा सामान लेकर ही आती है। यह एक परंपरा के रूप में ही हमारे सामने प्रस्तुत होती है। निम्न और मध्यवर्ग के लोगों के लिए शायद इसी कारण बेटी अभिशाप

मानी जाती होगी। 'बाबल तेरा देस में' उपन्यास में शकीला के घर बेटी का जन्म होने पर सब लोग कहते हैं कि बेटा होता तो ज्यादा खुशी होती। इस प्रकार बेटी और बेटे में यहाँ अंतर भी पाया जाता है।

मुस्लिम समाज में 'खतना' एक अनिवार्य संस्कार माना जाता है। सामान्य रूप से खतना का मतलब लड़के के लिंग के अग्रभाग की वह चमड़ी काटना जो नीचे की ओर लटकती रहती है। इसका उद्देश्य शुद्धता–पवित्रता बरकरार रखना है। खुदा से वार्तालाप के बाद हजरत इब्राहिम ने अपनी निन्यानवे की आयु में अपने परिजनों का यह संस्कार संपन्न किया था। वैसे बाल्यकाल में इस संस्कार की संपन्नता से शिशु को कम मुसीबतों का सामना करना पड़ता है।

'बाबल तेरा देस में' उपन्यास में भगवानदास मोरवाल ने मुस्लिम संस्कार का वर्णन विस्तृत रूपों में किया है। एक–एक बात को बड़े ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। कोई भी रश्म इस उपन्यास में मोरवाल से छूटने नहीं पाई है। ''हसीना के पहले लड़के यानी दीन मोहम्मद के पोते की मुसलमानी है। फतू सुबह से ही उस्तरा, बीच में चीरी, चौड़ी खपच्ची और दूसरे साधन के साथ आकर बैठा हुआ है।''[6]

खतना के बाद आस–पड़ोस के नाते–रिश्तेदारों को प्रीतिभोज भी कराया जाता है। मिठाईयाँ बाँटी जाती हैं। इस प्रकार एक खुशी का माहौल सा बन जाता है। मोरवाल ने अपने साहित्य के माध्यम से पाठकवर्ग को उन सारी बातों से अवगत कराने का पूरा प्रयास किया है। मुस्लिम सम्प्रदाय की एक–एक बात हमें भगवानदास मोरवाल के साहित्य में बखूबी देखने को मिलती है। मुस्लिम समाज में बहुत सारी बातें ऐसी भी हैं जिसके कारण हमें कभी–कभी संदेह भी होता है कि जिस बंधन को सभी लोग पवित्र और जनम–जनम का मानते हैं वही बंधन सिर्फ तीन बार तलाक कह देने से ही टूट जाता है। मुस्लिम समाज में तलाक के लिए कुरान शरीफ व हदीसों में खुदाई आदेशों का स्पष्ट निर्देश दिया गया है। इसलिए पत्नी के वैवाहिक संबंधों से मुक्त होना कहीं न कहीं सरल स्वरूप व पुरूष एक अधिकार का वर्णन ही माना जाता है। पुरूष, स्त्री को बिना कारण कभी भी तलाक दे सकता है, स्त्री चाहे उसे स्वीकार करे या न करे। पति–पत्नी दोनों स्वेच्छा से अदालती हस्तक्षेप के बिना वैवाहिक संबंध से मुक्त हो सकते हैं। पति अपनी इच्छानुसार भी अकेले पत्नी को तलाक दे सकता है।

मोरवाल ने अपने साहित्य के माध्यम से इस बात का विरोध भी किया है कि इस प्रकार से बंधन कभी तोड़ा नही जाता। सिर्फ तलाक मात्र ही कह देने से तलाक नहीं हो जाता है, इस्लाम में भी इस बात का विरोध किया गया है। इसकी भी कुछ शर्तें होती हैं कि किन–किन परिस्थितियों में तलाक दिया जा सकता है। ''शरीअत कहा कहते हैं ई तो मोहे पतो न है, पर मरद का मूँ सूं तीन बार निकली तल्लाक को मतलब है तल्लाक होगा।''[7] प्रस्तुत उपन्यास में कहा गया है कि अनपढ़ स्त्रियों को तो अन्य बात का पता नहीं है, पर बरसों से जो चली आ रही है, वह उसी परम्परा को ही सही मानती है।

तलाक के सारे अधिकार पुरूष के हाथों में ही होता है। स्त्रियाँ तो सिर्फ उन आदेशों का पालन करने के लिए ही होती हैं। दूसरी बात यह भी है कि तलाक तभी कहना चाहिए जब औरत कपड़ों में न हो। जब बीवी कपड़ों से पाक हो जाए तभी शौहर को तलाक देने का अधिकार है। इसके पीछे कारण यह भी है कि इतने दिनों में दोनों में सुलह हो जाए और फैसला बदल जाए। सगुफता को मुबारक अली ने तलाक दे दिया इसके बाद सगुफता की हालत खराब हो जाती है, सब लोग उसे बहुत समझाते है पर मुबारक किसी की बात नहीं मानता है। सगुफता अपनी आगे की जिन्दगी दो बेटियों के साथ कैसे काटेगी इसकी भी चिन्ता उसे लगी रहती है। मेहर की रकम जो उसे शादी के वक्त दी गई थी, जो अचानक पति की मृत्यु और तलाक के बाद अपने और बच्चों की आगे की जिन्दगी बिताने के लिए उपयोग किया जाता है। मुबारक अली उस मेहर को भी वापस देने से मना कर देता है।

आज भी कई ऐसी मान्यताएँ और रीति–रिवाज इस समाज में पनप रहे हैं। जिसके कारण आज भी समाज में लोग सदियों पुरानी पीढ़ी की तरह ही जीते आ रहे हैं। मोरवाल जी ने इन सारी बातों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करवाकर इस बात का निर्देश देने का प्रयास किया है कि आज इक्कीसवीं सदी में हमें इन सारे जातिगत भावों को दूर करके दुनिया की प्रगति में अपना योगदान देना है। ऐसा नहीं है कि सारे लोग इस तरह से हिन्दू–मुस्लिम के झगड़े से बाहर ही नहीं आ रहे हैं। मोरवाल ने अपने साहित्य में सलेमी, मनीराम, हाकिम तरकीला, संजा, सईदा ये सारे पात्र किसी जाति–पात को छूते तक नही है। एकही मुहल्ले में रहते हैं जैसे एक ही घर के सारे सदस्य हों। मोरवाल ने इन पात्रों के माध्यम से लोगों की मानसिकता को भी बदलने का प्रयास किया है।

संदर्भ

1) भगवानदास मोरवाल, बाबल तेरा देस में, पृ. क्र. 26
2) वही, पृ. क्र. 142
3) वही, पृ. क्र. 134
4) वही, पृ. क्र. 167
5) वही, पृ. क्र. 347
6) वही, पृ. क्र. 365